The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 2 | Issue 8 | August 2024
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

समावेशित शिक्षा की अवधारणा : वर्तमान परिप्रेक्ष्य तक

डॉ0 गौरव सिंह
सह आचार्य शिक्षा
कला मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग
निर्वाण विश्वविद्यालय, जयपुर
pathenagaurav@gmail.com

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Keywords:
समावेशी शिक्षा, पुनर्वास, अधिगम, सकारात्मक दृष्टिकोण, सर्वव्यापीकरण, समतामूलक, सर्वांगीण, मुख्यधारा, विशेष आवश्यकता, सहभागिता, समावेशन, संवेगात्मक।

ABSTRACT

एक सुखी संसार पाने के लिए आप हम सभी प्रयास करते है। सुखी जीवन का आधार है, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक, दोनों ही पक्षों में उचित संतुलन व समन्वय। सामाजिक दृष्टि से मान्य तथा भावात्मक स्तर के अनुकूल काम करने से हमें सुख मिलता है। विशेष आवश्यकता वाले बच्चे हमारे समाज का अभिन्न अंग है। आज विज्ञान व चिकित्सा शास्त्र ने इतनी तरक्की कर ली है कि विकलांगता अभिशाप नहीं है। पढ़े-लिखे नागरिक के रूप में हमारा यह कर्तव्य बनता है कि हम समाज में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को शैक्षिक व मनौवैज्ञानिक स्तर पर इतना सम्बल दे की उनकी एक स्वस्थ व सुन्दर समाज के निर्माण में बराबर भागीदारी हो। शिक्षा के सर्वव्यापीकरण या सभी के लिए शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करना है तो उन बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी करनी होगी जो सामान्य बच्चों से शारीरिक, सामाजिक, संवेगात्मक, तथा ज्ञानइन्द्रिय आदि क्षेत्रों में विचलित होते है। समावेशित शिक्षा सभी बच्चों में अंतर, मूल्य व सम्मान की पहचान करती है। यह एक ऐसी रणनीति है, जो समावेशित समाज की रचना के अंतिम भारत को प्राप्त करना चाहती है। इसमें सभी बच्चे व शिक्षक, अभिभावक अपना योगदान दे चाहे उनकी कोई भी उम्र हो, कोई लिंग हो, कोई क्षमता या कोई जाति सम्प्रदाय हो।

प्रस्तावना

शिक्षा मनुष्य को अंधकार से उजाले की ओर लाती है। सरल शब्दो में शिक्षा का अर्थ ही बालक की जन्मजात शक्तियों या गुणों को विकसित करके उसका सर्वांगीण विकास करना है। मनुष्य के अंदर जन्म से ही कुछ शक्तियाँ तथा प्रवत्तियाँ होती हैं। वातावरण के सम्पर्क में आने से क्रमशः उनका विकास एवं संशोधन होता है। जैसे वृक्ष का स्वरूप उसके बीज में सम्मलित होता है वैसे ही मनुष्य का सारा व्यक्तित्व उसके अंदर सम्मिलित होता है। जीवन में गुणवत्ता की वृद्धि के लिए शिक्षा के द्वारा बालक में निहित दक्षताओं का विकास किया जाता है। आज 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था सर्वप्रथम उद्देश्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात से इस उद्देश्य की प्राप्ति के प्रयास चल रहे है, परन्तु आज प्रारम्भिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण के लक्ष्य की प्राप्ति ही आंशिक रूप से हो पाई है। इसके लिए अनेक कारण उत्तरदायी हैं। जिनमें एक महत्वपूर्ण कारण है- विशेष आवश्यकता वाले बालकों की शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का अभाव। शिक्षा मानव की समस्त स्वाभाविक शक्तियों का पूर्ण प्रगतिशील विकास है, अतः शिक्षा अर्जन करने वाला बालक, चाहे वह सामान्य हो या विशेष आवश्यकता वाले, उसे शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिलना न्याय संगत है। भारत स्वतंत्र देश है, इस देश में प्रत्येक बालक को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार है। संवैधानिक दृष्टि से किसी भी बालक को शिक्षा से वंचित नहीं किया जा सकता, चाहे किसी बालक की क्षमता कम हो या अधिक। वह अपनी गति से शिक्षा प्राप्त कर सकता है। विश्व में जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग विशेष आवश्यकता वाले व्यक्तियों का है। विश्व में कुल विकलांगों का आंठवा हिस्सा भारत में है, इस प्रकार विशेष आवश्यकता वाले वर्ग का प्रभाव आर्थिक व सामाजिक रूप से समाज पर पड़ता है। अतः आवश्यकता इस बात की है विकलांग बच्चों को उन्नति के पर्याप्त अवसर दिये जाये तथा समाज एवं राष्ट्र की उन्नति में उनका भी सहयोग हो। 'समावेशित शिक्षा' यानि 'इनक्लूसिव एजूकेशन' का विचार इस बढ़ते हुए मतैक्य की प्रतिक्रिया स्वरूप पैदा हुआ कि सभी बच्चों को उनकी पृष्ठभूमि, उपलब्धि और अशक्तता को ध्यान में रखे बगैर अपने ही इलाके में एक समान शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।

समावेशन का अर्थ

समावेशन का शाब्दिक अर्थ है- सम्मिलित करना, एक भाग मानना या साथ लेना। समावेश का अर्थ सदस्यता से है, जिसका संबंध समुदाय से है। समावेशन का अर्थ है कि स्कूल की संरचना एक समुदाय के रूप में की जाये। जहां सभी बच्चें सीख सके। समावेशन का दर्शन समुदाय की सदस्यता और समुदाय का अंग होने पर आधारित है। यह सभी तक पहुँचने का एक तरीका है। यह एक ऐसा दर्शन है जिसका उद्देश्य कक्षा कक्ष में सभी बच्चों के लिए शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाना है। समावेशन से आशय चुनौतियों में जकड़े हुए बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा करने के निमित्त उत्तम अध्यापन परिपाटियों से होता है। समावेशन का आशय यह है कि अधिगम कठिनाईयों (विकलांगता के कारण) से युक्त

छात्र नियमित शिक्षा क्लासरूम का अभिन्न अंग है। विकलांगता से युक्त छात्रों को अध्यापकों और समकक्ष छात्रों द्वारा कक्षा के सहभागी सदस्यों के रूप में समझा जाता है। फलतः समावेशित माहौल में विकलांगता से युक्त छात्रों को सेवाओं और समर्थन दोनों में से किसी की क्षति नहीं होती लेकिन उन्हें अपने सामाजिक और अधिगम माहौल में कार्योत्मक और सार्थक तरीकों से आगे बढ़ने के अवसर सुलभ हो जाते हैं।

समावेशित शिक्षा

समावेशित शिक्षा का आशय ऐसी शैक्षिक पद्धति से है जिसका उद्देश्य समान अवसर और सभी की पूर्ण सहभागिता प्राप्त करने के निमित्त एक उपयुक्त अनुकूल माहौल जुटाना है। साथ ही विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को मुख्यधारा की शिक्षा के क्षेत्र अधिकार में भी लाना है। शिक्षा के संदर्भ में समावेश का अर्थ विद्यालय की ऐसी पूर्ण संरचना से है, जहां सभी प्रकार के बालक शिक्षा ग्रहण कर सके। एक ऐसा विद्यालय जहां शिक्षक शिक्षार्थी को सीखने के विभिन्न अवसर प्रदान करे। समावेशी शिक्षा के मूल में अच्छा शिक्षण, अभ्यास, शिक्षक-शिक्षार्थी के मध्य अच्छे संबंध, सभी बालकों का कक्षा में गुणात्मक सुधार तथा बालकों का विभिन्न प्रकार से सर्वांगींण विकास में सहायता करना है। समावेशी शिक्षा दर्शन में उपर्युक्त गुणों का समावेश है। कक्षा में सभी बालकों का प्रदर्शन तभी अच्छा हो सकता है जब कक्षा समायोजन इस तरह किया गया हो कि सभी प्रकार के बालको की व्यक्तिगत भिन्नता की ध्यान में रखा गया हो। समावेशी शिक्षा तब तक नहीं हो सकती जब तक बच्चे की भागेदारी न हो।

वर्ल्ड एजुकेशन फोरम युनेस्कों के अनुसार – 'समावेशित शिक्षा का विचार इस प्रतिक्रिया स्वरूप पैदा हुआ है कि बच्चों को उनकी पृष्ठभूमि उपलब्धि और अशक्तता को ध्यान में रखे बगैर अपने ही इलाके में एक समान शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है।'

समावेशी शिक्षा का क्षेत्र बहुत व्यापक है जिसके अंतर्गत वे सभी बच्चे आयेंगे जो हाँशिए पर होते हैं, जिनकी अगर देखभाल न की गई तो वे शिक्षा व्यवस्था से बाहर चले जायेंगे। समावेशित शिक्षा से आशय उस शिक्षा व्यवस्था से है, जिसके अंतर्गत सामान्य विद्यालय में सामान्य पाठ्यक्रम को विशेष आवश्यकता वाले बच्चे साथ-साथ अध्ययन करते है।

समावेशित शिक्षा का इतिहास

प्रारम्भिक इतिहास 1800 से पूर्व अपंग व्यक्तियों के साथ सामाजिक जुड़ाव का प्रारम्भिक इतिहास अंधविश्वास और गलतफहमियों पर केन्द्रित रहा। प्रारम्भिक दस्तावेज यह दर्शाते है कि अंपग बच्चों को ईश्वर के शाप के रूप में देखा जाता था। मध्य युग में इन्हें बुरी आत्मा के रूप में देखा जाता था, इन्हें घर से बाहर कर दिया जाता था। रेन डेस्टकार्ट, 17वीं

सदी के दार्शनिक, ने सीखने के सिंद्धान्त की नींव रखी। पेड्री पोंस डी लियान एक स्पेशिन माक ने बहरे व्यक्तियों को पढ़ना, लिखना और बोलना सिखाना शुरू किया। जीन गेस्पर्ड इटार्ड ने एक पशु समान व्यवहार करने वाले बालक को पीना, खाना, पहनना, तीन अक्षर के शब्दों को समझना सिखाया। इस प्रकार पेरिस फ्रांस में श्रवण दोष, दृष्टिदोष, मानसिक पिछड़ों के लिए शिक्षा शुरू हुई।

संस्थानों का युग 1800-1900 यूरोप और अमेरिका में संस्थानिक आन्दोलन चला पर वह मात्र अपंग लोगों की जरूरत पर शिक्षाविद और स्वास्थ्यकर्मी तथा जनता की बढ़ती जागरूकता का प्रतिबिम्ब था। अपंग व्यक्तियों के लिए व्यक्तिगत तौर पर पहले कार्यक्रम में यूरोप के साथ फ्रांस, जर्मनी, स्कॉटलैण्ड और इंग्लैण्ड ने जब भाग लिया तो समूह बुद्धिलब्धि जांच का प्रारूप बनाया गया। इसके दो रूप थे अल्फा टेस्ट और बीटा अभाषा टेस्ट और आश्चर्यजनक रूप से बड़ी संख्या में लोगों का बुद्धिलब्धि का स्तर कम पाया गया।

पब्लिक स्कूल में विशिष्ट कक्षाओं का युग 1900-1970 अपंग बच्चों के लिए प्रारंभिक शिक्षा के औपचारिक प्रयास 1900 के आस पास किये गये, परन्तु उसमें थोड़ी ही सफलता मिली। यद्यपि 1960-70 को विशिष्ट कक्षाओं का युग कहा जाता है, कई तरह की अपंगता का पालन पोषण तो होता रहा, लेकिन उन्हें शिक्षा प्राप्त करने या काम करने के उपर्युक्त नहीं समझा गया। 1784 में वेलिनेटिइंग ने पेरिस में दृष्टिहीनों के लिए विद्यालय की स्थापना की। उस समय दृष्टिहीनों को पढ़ाने के लिए रोमन लिपि का प्रयोग किया जाता था। 50 वर्ष बाद इसी विद्यालय के छात्र लुईस ब्रेल, जो स्वयं दृष्टिहीन थे, ने खोजा की उभरी हुई रेखाएं दृष्टिहीनों के द्वारा छूकर समझना सरल नहीं है। 1929 में उन्होने ब्रेल प्रणाली की खोज की। विशेष शिक्षा के समर्थकों का पक्का विश्वास रहा कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चो हेतु समेकित शिक्षा कार्यक्रम द्वारा इन बच्चों को सफलतापूर्वक एकीकृत किया जा रहा है।

भारत में विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की शिक्षा का इतिहास

भारत में विकलांगता के क्षेत्र में सर्वप्रथम दृष्टिबाधिता पर ध्यान दिया गया। ब्रिटिश शासन ने 1942 में अंधत्व के कारण, निवारण व कल्याण हेतु समिति का गठन किया। इस समिति ने शिक्षा मंत्रालय में अंधत्व पर एक इकाई को स्थापित करने की सिफारिश की। यह इकाई 1947 में बनाई गयी एवं कुछ समय बाद विकलांगता वाले बच्चों की शिक्षा के कार्यक्रम को इससे जोड़ा गया। स्वतंत्रता पूर्व भारत में विभिन्न प्रकार के विकलांगों के लिए शिक्षा के क्षेत्र में जो भी प्रयास किये जा रहे थे, वे प्रमुख रूप से मानव सेवा संघों तथा संस्थाओं द्वारा किये जा रहे थे। स्वतंत्रता से पूर्व मानसिक न्यूनता के ग्रसित बालकों की शिक्षा के लिए बंगाल में दो विद्यालय तथा एक विद्यालय बम्बई में था।

स्वतंत्रता के पश्चात शिक्षा -

स्वतंत्रता के पश्चात शिक्षा-विभाग तथा समाज कल्याण विभाग को विकलांगो की शिक्षा का भार सौंपा गया। भारत में देखने सम्बन्धी समस्या वाले बच्चों के लिए ब्रेल लिपि का प्रचलन शुरू हुआ। सबसे पहले देहरादून में देखने सम्बन्धी समस्या वाले बच्चों के लिए एक विद्यालय खोला गया। 1952 ई. में भारतीय बाल कल्याण बोर्ड की स्थापना की गई जो विभिन्न प्रकार के विकलांगों की शैक्षिक तथा व्यावसायिक समस्याओं का समाधान करता था। केन्द्रीय सरकार को शिक्षा, प्रशिक्षण तथा नियोग संबंधी मामलों का परामर्श प्रदान करने हेतु एक राष्ट्रीय सलाहकार परिषद का भी गठन किया गया एवं विभिन्न क्षेत्रों में विशेष नियोजन कार्यालय स्थापित किये गये। मानसिक रूप से दुर्बल बालकों को शिक्षा के लिए बंगाल के दोनों विद्यालयों का विकास किया गया। बुद्धि स्तरों का पता लगाने हेतु इलाहबाद की मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला ने अपने मनोवैज्ञानिक परीक्षाएं तैयार की। 1955-56 तक विकलांगों की शिक्षा पर किये जाने वाले व्यय का 50 प्रतिशत भार केन्द्र सरकार तथा शेष राज्य सरकार वहन करती थी, किन्तु इसके बाद समस्त भार केन्द्रीय सरकार वहन करने लगी।

कोठारी आयोग 1964-1966

कोठारी आयोग के अनुसार विकलांग बालक को दी जाने वाली शिक्षा का प्रमुख कार्य है, उसे सामाजिक-सांस्कृतिक वातावरण से सामंजस्य करने का लिए तैयार करना, जिसका निर्माण सामान्य व्यक्ति की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हुआ है, अतः आवश्यक है कि विकलांग बालको की शिक्षा सामान्य शिक्षा प्रणाली का अभिन्न अंग हो। यदि विकलांग बच्चे सामान्य समुदाय के साथ रहते है तो विशिष्ट विद्यालय में शिक्षा के लिए उन्हें पृथक नहीं करना चाहिए, बल्कि सामान्य बच्चों के साथ सामान्य विद्यालय में पढ़ाया जाना चाहिए।

भारतीय पुनर्वास अधिनियम 1981 -

विकलांगो के पुनर्वास पर सन 1981 (अन्तर्राष्ट्रीय विकलांग वर्ष) में भारत सरकार का विशेष ध्यान गया। प्रशिक्षित मानव संसाधनों की कमी के चलते देश में पुनर्वास सेवाओं का अपेक्षित विस्तार नहीं हुआ। विकलांगता के क्षेत्र में चल रहे वर्तमान प्रशिक्षण कार्यक्रम सम्भवत एकांगी (अलग-अलग) एवं अस्थाई थे। पूर्वस्नातक, स्नातक एवं स्नातकोतर स्तर पर विभिन्न संस्थानों द्वारा चलाये जा रहे कार्यक्रमों में एकरूपता का अभाव था। अतः भारत सरकार ने 1986 में पुनर्वास परिषद के गठन का निर्णय लिया जिसे निम्न दायित्व दिये गए-

- प्रशिक्षण नीति एवं कार्यक्रम बनाना।

- विकलांगता के क्षेत्र में कार्य वाले व्यावसायिकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों के मानकीकरण का कार्य करना।

न्यायविद वहरूल इस्लाम समिति की संस्तुतियों के आधार पर यह निर्णय लिया गया कि परिषद को वैधानिक निकाय का दर्जा प्राप्त होना चाहिए। इसको ध्यान में रखकर परिषद को वैधानिक अधिकार देने तथा उसके कार्यो को सम्पादित करने के लिए दिसम्बर 1991 में संसद में एक विधेयक प्रस्तुत किया गया, जिसे भारत के राष्ट्रपति ने सितम्बर 1992 को मंजूरी दी। सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार ने अधिनियम के रूप में 1993 को इसकी अधिसूचना जारी की। इस प्रकार भारतीय पुर्नवास परिषद सन् 1986 में एक पंजीकृत संस्था बनी, जिसे 1993 में वैधानिक निकाय का दर्जा प्राप्त हुंआ। हम गर्व के साथ कह सकते है की भारतीय पुर्नवास परिषद् विश्व में अपनी तरह की ऐसी अकेली संस्था है। क्योंकि यह विभिन्न योग्यता वाले निचले स्तर से लेकर शीर्ष तक के विभिन्न श्रेणी के व्यावसायिकों के मानव संसाधन विकास पर ध्यान देती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 -

इस शिक्षा नीति में समानता के लिये शिक्षा नामक अध्याय में विकलांग बच्चों और सामान्य बच्चों की शिक्षा के एकीकरण की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

सबके लिए शिक्षा 1990 -

जमिटियान (थाइलैण्ड) में सन् 1990 में हुई 'सबके लिए शिक्षा' विश्व बैठक में सभी व्यक्तियों की मूलभूत अधिगम आवश्यकताओं को पूरा करने पर जोर दिया गया, जिससे सभी बच्चे शिक्षा का लाभ उठाने में समर्थ हो सके। 'सबके लिए शिक्षा' घोषणा को मानवजाति के ऐतिहासिक तारतम्य में एक मुख्य लक्ष्य स्वीकार किया जाता है, जिसके द्वारा मूलभूत प्रारंभिक शिक्षा के संबंध में एक स्पष्ट तथा सर्वस्वीकार्य दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया।

सालामान्का सम्मेलन 1994 -

सालामान्का, स्पेन में 1994 में यूनेस्कों द्वारा प्रायोजित सम्मेलन में 92 राष्ट्रों तथा 25 अन्तर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संस्थानों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया तथा सभी राष्ट्रों ने समावेशित शिक्षा की व्यवस्था की जाने की जोरदार सिफारिश की।

निःशक्तजन अधिनियम 1995 -

इस अधिनियम को 1995 में पारित और 1996 में अधिसूचित किया। इस अधिनियम का उद्देश्य निशःक्त व्यक्तियों को सुविधाएं, सेवायें प्रदान करने के लिए केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों तथा स्थानीय निकायों का दायित्व निर्धारण करना है। जिससे वे देश के उत्पादक व उपयोगी नागरिक के रूप में समान अवसर के लिए भागीदारी कर सकें। इस अधिनियम में निःशक्त व्यक्तियों के अधिकारों व सुविधाओं की सूची है।

राष्ट्रीय न्यास अधिनियम 1999 -

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा संचालित राष्ट्रीय मानसिक मंदता, प्रमस्तिष्कीय पक्षाघात, स्वयपरायणता एवं बहु-निःशक्तताग्रस्त व्यक्ति का कल्याण न्यास अधिनियम 1999 कहा जाता है, इस अधिनियम को 30-12-1999 को महामहिम राष्ट्रपति महोदय ने हस्ताक्षर कर स्वीकृत प्रदान की।

समावेशित शिक्षा और सर्वशिक्षा अभियान 2000 -

प्राथमिक शिक्षा राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली का प्रथम सोपान है। इसी स्तर पर बच्चों की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक एवं भावात्मक योग्यताओं का विकास निर्भर है। प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण हेतु सन् 2000 में केन्द्र एवं राज्य सरकार के परस्पर सहयोग से सर्वशिक्षा अभियान जैसी राष्ट्रीय फलक वाली योजना का शुभारंभ किया गया, जिसका लक्ष्य 6 से 14 वर्ष तक के सभी बच्चों को उनकी आयु के समकक्ष विद्यार्थियों के साथ एक समावेशित शैक्षिक वातावरण में शैक्षिक अवसर उपलब्ध करवाना है। सर्वशिक्षा अभियान में विशिष्ट शैक्षिक आवश्यकता वाले बच्चों की पहचान, विशिष्ट अध्यापकों की नियुक्ति, विद्यालयों भवनों को अवरोध मुक्त बनाना, गैर सरकारी संस्थाओं का सहयोग, तकनीकी उपकरणों की व्यवस्था, सामान्य अध्यापकों को विशिष्ट आवश्यकताओं वाले बच्चों के प्रति संवेदनशील बनाने हेतु उन्मुखी कार्यक्रमों का आयोजन समेत अनेक प्रकार के कार्यो एवं प्रयासों द्वारा उनकों सामान्य शिक्षा में सम्मिलित करके शिक्षित किये जाने के प्रयास को देखकर लगता है कि वर्षो पहले शिक्षा के सार्वभौमिकरण के जिस लक्ष्य को देखा गया था शायद वह वर्तमान में सार्थक है ।

समावेशित शिक्षा और राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 –

राष्ट्रीय पाठयचर्या की रूपरेखा 2005 के अनुसार समावेशी शिक्षा की मुख्य धारणायें निम्न प्रकार से है -

- समावेशी शिक्षा का तात्पर्य समाविष्ट करने से है।
- विकलांगता एक सामाजिक जिम्मेदारी है इसे स्वीकार करना है।

- सभी विशेष शैक्षिक आवश्यकता वाले विद्यार्थियों को विद्यालय में प्रवेश को रोकने की कोई प्रक्रिया नहीं होनी चाहिए।
- समावेशन केवल विकलांग बच्चों तक सीमित नहीं है बल्कि इसका अर्थ किसी भी बच्चें का बहिष्कार नहीं होना भी है।
- विकलांगता समाज द्वारा निर्मित है, इसे तोड़े।
- भौतिक, सामाजिक और व्यवहार संबंधी बाधाएं दूर करें।
- सहारा देने वाली सेवाए आवश्यक सेवाऐं है।
- बच्चों से सीखे, उनकी कमियों को नहीं बल्कि शक्तियों को पहचाने।
- आपस में आदर भाव और परस्पर निर्भरता बढाएं।

राष्ट्रीय विकलांगजन नीति 2006 -

देश में वर्ष 2006 में राष्ट्रीय विकलांगजन नीति निःशक्त व्यक्तियों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने हेतु बनाई गई। इसमें सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं को कार्य करने का विवरण दिया है। यह नीति मुख्यतः निम्न लिखित पर केन्द्रित है -

- विकलांग निवारण
- विकलांग महिलायें
- बाधामुक्त वातावरण
- पुनर्वास उपाय
- विकलांग बच्चे
- सामाजिक सुरक्षा
- विकलांगता प्रमाण पत्र
- विकलांग व्यक्तियों के सम्बंध में नियमित सूचना कार्यग्रहण
- अनुसंधान
- खेलकुद मनोरंजन तथा सांस्कृतिक जीवन-
- विकलांग व्यक्तियों से सम्बंधित विद्यमान अधिनियमों में संसोधन

समावेशित शिक्षा और निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 -

- अप्रैल 2010 से लागू, धारा शिक्षा पूरी वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक को प्रारम्भिक 14-6 (1) 3 पास के विद्यालय में निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा।-होने तक किसी आस
- निःशक्त व्यक्ति ,समान अवसर) अधिकार संरक्षण, पूर्ण भागीदारीके 2 की धारा 1995 अधिनियम (में परिभाषि (झ) खण्डत निःशक्तता से ग्रस्त किसी बालक को उक्त अधिनियम के अध्याय पांच के उपबन्धों के अनुसार निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 -

समतामूलक और समावेशी शिक्षा सभी के लिए अधिगमः राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस बात की पुनः पुष्टि करती है कि स्कूल शिक्षा में पहुँच सहभागिता और अधिगम परिणामों में सामाजिक श्रेणी के अंतरालों को दूर करना सभी शिक्षा क्षेत्र विकास कार्यक्रम का मुख्य लक्ष्य होगा। नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों या दिव्यांग बच्चों को किसी भी अन्य बच्चे के समान गुणवत्तापूर्वक शिक्षा प्राप्त करने के समान अवसर प्रदान करने के लिए सक्षम तंत्र बनाने के महत्व को भी पहचानती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में उल्लेख है की दिव्यांग बच्चों के एकीकरण को ध्यान में रखते हुए विद्यालय व विद्यालय परिसरों की वित्तीय मदद की दृष्टि से सुस्पष्ट व कुशल प्रावधानों की व्यवस्था की जायेगी, इसके साथ यह ध्यान भी दिया जायेगा कि विद्यालय व विद्यालय परिसरों में दिव्यांग बच्चों की आवश्यकताओं से संबंधित प्रशिक्षण प्राप्त शिक्षकों की नियुक्ति की जाये। साथ ही गंभीर अथवा एक से अधिक विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए गाँव-ब्लॉक स्तर, जहाँ भी आवश्यकता हो, पर एक संसाधन केन्द्र स्थापित किया जायेगा। बुनियादी विषयों को सिखाने के लिए उच्चतर गुणवत्ता वाले मॉड्यूल विकसित करेगा साथ ही दिव्यांग बच्चों की सुरक्षा पर पर्याप्त ध्यान दिया जायेगा।

उपर्युक्त सभी अधिनियमों और नीतियों का केंद्र बिन्दु समावेशी शिक्षा से है समावेशी शिक्षा का उद्देश्य सभी शिक्षा की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को समझकर पूरा करना है।

समावेशन के कारण

समावेशित शिक्षा संबंधी अध्ययन केन्द्र बिस्ट्रल ने निम्नलिखित दस कारण बताए है, जिनकी वजह से समावेशित शिक्षा अपनाई जानी चाहिए-

- सभी बच्चों को एक साथ सीखने का अधिकार है।

- बच्चों का उनकी अशक्तता अथवा अध्ययन कठिनाई के कारण अलग रखकर या बाहर भेजकर उनका मूल्य कम नहीं किया जाना चाहिए अथवा उनके विरूद्ध भेद नहीं किया जाना चाहिए।
- बच्चों को उनकी शिक्षा के लिए अलग करने का कोई वैध कारण नहीं है। बच्चे एक साथ रहते है प्रत्येक के लिए लाभों और फायदों के साथ उन्हें एक दूसरे से संरक्षित करने की कोई जरूरत नहीं है।
- अनुसंधान से पता चलता है कि बच्चे एकीकृत व्यवस्था में शैक्षणिक व सामाजिक रूप से बेहतर कार्य निष्पादन करते है।
- एक पृथकीकृत स्कूल में ऐसी कोई खास पढाई अथवा देखभाल नहीं होती जो एक सामान्य स्कूल में नहीं हो सकती।
- एक प्रतिद्धता और सहायता मिले तो समावेशित शिक्षा शैक्षिक संस्थानों का एक अधिक कार्यकुशल उपयोग है।
- पृथ्थकरण से बच्चों मे भय, अज्ञान पैदा होते है तथा पूर्वाग्रहों को जन्म मिलता है।
- सभी बच्चों को एक ऐसी शिक्षा की जरूरत है जिससे उन्हें विकसित करने में तथा जीवन की मुख्य धारा के लिए तैयार किया जा सके।
- केवल समावेशन में ही भय को कम करने तथा मित्रता व सम्मान व समझ का निर्माण करने की क्षमता है।
- अशक्त प्रौढ़ अपने आप को विशेष स्कूलों से निकले उत्तरजीवी बताते हुए पृथ्थकरण को समाप्त करने की मांग कर रहे है।

समोवशित शिक्षा की विशेषताएं

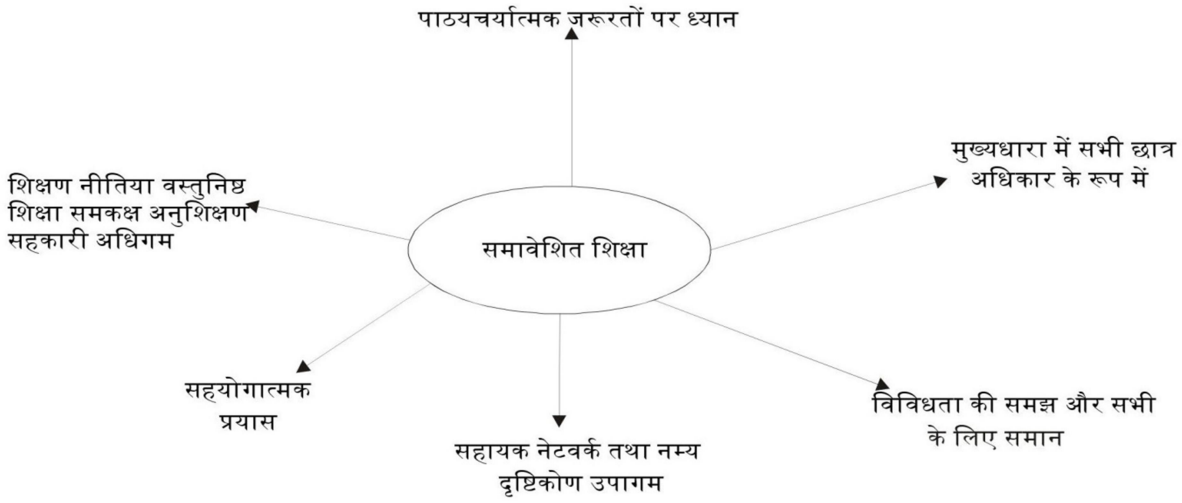

समावेशी शिक्षा का प्रारूप

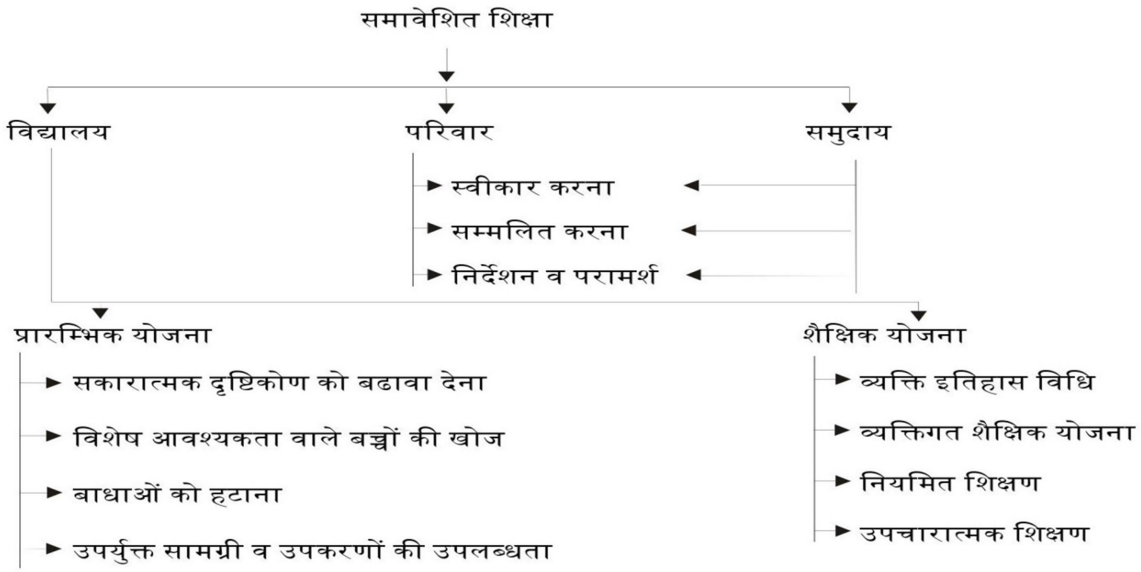

- समावेशन के लिए विद्यालय, परिवार और समुदाय तीनों की अहम भूमिका है। इसमें परिवार का समुदाय द्वारा विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को उनके द्वारा स्वीकार करना, सम्मलित करना और उसे निर्देशन व परामर्श प्रदान करना मुख्य कार्य है।
- समावेशन में विद्यालय की भूमिका में प्रारंभिक योजना व शैक्षिक योजना बहुत आवश्यक है। प्रारंभिक योजना में सकारात्मक दृष्टिकोण को बढाना विशेष आवश्यकता वाले बच्चों की खोज करना, उनके शिक्षण में आने वाली सभी बाधाओं को हटाना व उनको उपर्युक्त सहायक सामग्री व उपकरण उपलब्ध कराना।
- शैक्षिक योजना के अन्तर्गत विशेष आवश्यकता वाले बच्चे की समस्या को समाप्त करने के लिए उसका व्यक्तिगत इतिहास विधि से उसकी समस्या का अध्ययन किया जाये। इसके लिए व्यक्तिगत शैक्षिक योजना बनाई जाये व समस्या को समाप्त करने के लिए नियमित शिक्षा व उपचारात्मक शिक्षण किया जाये। जिससे विशेष आवश्यकता वाले बालक सामान्य बालक बने व राष्ट्र के विकास को अपना योगदान दे।

निष्कर्ष:

शिक्षा सामाजिक न्याय और समानता प्राप्त करने का एकमात्र और सबसे प्रभावी साधन है। समावेशी शिक्षा न सिर्फ स्वयं में एक आवश्यक लक्ष्य है, बल्कि समावेशी समाज निर्माण के लिए भी अनिवार्य कदम है जिसमें प्रत्येक नागरिक को सपने संजाने, विकास करने और राष्ट्र हित में योगदान करने के अवसर उपलब्ध हो, जिससे भारत देश के किसी भी बच्चें के सीखने और आगे बढ़ने के अवसरों में उसकी जन्म या पृष्ठभूमि से संबंधित परिस्थितियाँ बाधक न बन

पायें। समावेशन की नीति को हर स्कूल और सारी शिक्षा व्यवस्था में व्यापक रूप से लागू किए जाने की जरूरत है। बच्चे के जीवन के हर क्षेत्र में, वह चाहे स्कूल में हो या बाहर, सभी बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित किए जाने की जरूरत है।

संदर्भ :

1. डॉ.आशा शर्मा, समावेशी शिक्षा, प्रथम संस्करण, अमित प्रकाशन जालन्धर, 2016, पृष्ठ संख्या 2015

2. डॉ. आई बी. चुगतई, समावेशित शिक्षा क्या, क्यों और कैसे?, निवेदिता पत्रिका बनारस, 2011, पृष्ठ संख्या 38

3. डॉ. आर.ए. शर्मा, विशिष्ट शिक्षा का प्रारूप, आर. लाल बुक डिपो मेरठ, 2013, पृष्ठ संख्या 13

4. डॉ. पारूल शर्मा व डॉ.ममता चौधरी, समावेशी शिक्षा, आर.लाल पब्लिशर्स मेरठ, 2023, पृष्ठ संख्या 29

5. डॉ. शशीप्रभा, समावेशी शिक्षा, कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2020, पृष्ठ संख्या 20

6. डॉ. सुनीता नारंग, विशिष्ट शिक्षा की संकल्पना और उसका विषय क्षेत्र, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना, 2005, पृष्ठ संख्या 48

7. गुरसरन दास त्यागी, समावेशी शिक्षा, प्रथम संस्करण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 2016, पृष्ठ संख्या 70

8. मनीष शर्मा, प्रारम्भिक स्तर पर समावेशित शिक्षा के प्रति शिक्षकों के दृष्टिकोण का अध्ययन, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, अजमेर, 2012, पृष्ठ संख्या 10

9. नीरज शुक्ला, विद्यालयी शिक्षा के क्षेत्र में अनुभव, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ संख्या 64

10. नीना दास, समावेशी शिक्षा : विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के लिए, अटलांटिक पब्लिशर्स, 2016, पृष्ठ संख्या 40

12. विपिन कुमार सिंह व ज्योत्सना चौहान, समावेशी शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन, 2021, पृष्ठ संख्या 16

13. यतेन्द्र ठाकुर, समोवशी शिक्षा, प्रथम संस्करण, अग्रवाल पब्लिकेशन आगरा, 2007, पृष्ठ संख्या 02

14. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 96

15. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, पृष्ठ संख्या 38